SAMBODHI

[illegible]

EDITOR

JITENDRA B. SHAH

L. D. INSTITUTE OF INDOLOGY
AHMEDABAD

SAMBODHI
VOI. XXXIX 2016

ISSN 2249-6661

Editor
Jitendra B. Shah

Published by
Dr. Jitendra B. Shah
Director
L. D. Institute of Indology
Ahmedabad 380 009 (India)
Phone : 26302463 Fax : 26307326
l.dindologyorg@gmail.com

Price : Rs.200/-

Printed by
Navprabhat Printing Press
Ahmedabad
M:9825598855

वेदों में वर्णित राष्ट्रीय भावना

महेन्द्रकुमार अं. दवे

सामान्यतः प्राचीन भारत में राष्ट्र (Nation) की विभावना विकसित नहीं हुई थी । राजकीय दृष्टिकोण से एक समय भारत एक राष्ट्र न हो ऐसा भी बन सके। किन्तु धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भारत बहु प्राचीन काल से एक राष्ट्र था, और सतत एक राष्ट्र रहा हैं । प्राचीन काल में आर्यावृत्त था बाद में भारत वर्ष बना, वेदों में अनेक स्थानों में आर्यावृत्त का एक राष्ट्ररूप से उल्लेख मिलता हैं ।

इससे वेदकालीन समाज में राष्ट्रभावना विद्यमान थी । लोग राष्ट्र की स्थिरता के लिये प्रार्थना करते थे, राष्ट्र शब्द देश के राष्ट्र के लिये उपयोग में था । व्रत, गण, शर्ध शब्दें कुल, ज्ञाति के ग्राम के लिये प्रचलित थे । ग्राम से बड़ा विश और विश का समुह जन और लोगों का रक्षक राजा कहलाता था ।

विश्वबन्धुत्व तथा प्राणीमात्र के साथ प्रीतिपूर्ण व्यवहार की शिक्षा वेदों में विद्यमान थी । किन्तु व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीयता का उपदेश किया हैं ।[1] अथर्ववेदमें भी कहा हैं कि "**माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः ।**" (12-1-12) अर्थात् भूमि हमारी माता हैं और हम उनके पुत्र हैं । प्रत्येक मनुष्य का राष्ट्रोन्नति में सावधान रहने का कर्तव्य है । राष्ट्र संचालन में निर्बलता न आए इसीलिये राष्ट्र की व्यवस्था में सबका ध्यान होना आवश्यक हैं । इसीलिये बुद्धिमान पुरुष को प्रमुख बनाकर उनकी शक्ति का उपयोग करना चाहिए । "हे विद्वानलोगों श्रेष्ठ पुरुष को शत्रुरहित किया जाय अर्थात् आप में से कोई उनके साथ शत्रुता का व्यवहार न करें जिससे ज्यादा से ज्यादा वो प्रजा का अच्छी तरह रक्षण कर सके । और सब लोग गौरवशाली बने रहे । वो राज्य कोई एक का न बनकर, सबका बन सके जनता का राज्य बने, कोई व्यक्ति अपनी मनमानी न कर सके । राज्यशक्ति की समृद्धि प्राप्त हो । कोई माता-पिता के पुत्र को राजा के रूप में नियुक्ति की जाय, और वो ही आप का राजा हैं कोमल स्वभाव वाला वो ही हम ब्राह्मणो का राजा बने ।"[2]

एक नायक के बिना कुल, गाम, विश और जनपद में एकता और व्यवस्था नहीं टिक सकती। शत्रु से आक्रमण के समय प्रजा में एकत्व रखने का प्रधानकार्य राजा का रहता था । राजपद कुलक्रमागत

रहता था । तथापि वधर्याश्व, दिवोदास, सुदास, पिजवान, पुरुकुत्स, त्रसदस्यु, मित्रातिथि आदि उदाहरण चुनाव की भी साक्षी देते हैं । राजा की पसंदगी का निर्देश संवरणसूक्त में किया हैं ।[3] राजा की पसंदगी में स्त्रीयाँ भी भाग लेती थी । वे राष्ट्रों की अधिष्ठात्री कहलाती थी ।[4] शासक के राज्य ग्रहण के समय "आप शौर्य के स्रोत का केन्द्र बने । आप किसी का अपमान और हिंसा न करो, आप उत्तम कर्म के द्वारा साम्राज्य के शासक बने, आप मृत्युरूप आपत्ति से हमारी रक्षा करें, आप यशस्वी, सत्यनिष्ठा, मंगलमयी बनकर प्रजा का अनुशासन कीजिए । ऐसी भावना प्रजा भी रखती थी ।[5]

इसी तरह प्रजा ही राजा को पसंद करती थी ।[6] राजा के लिये जरुरी था की वह प्रजा के साथ अच्छा व्यवहार करें, दुर्व्यवहार न करें ।[7] राष्ट्र की अभ्युन्नति के लिये शासक एवं समिति के विचार, मन, चित्त, प्रयत्न और हृदय एक समान होने का आवश्यक मनाता था ।[8] अथर्ववेद में सभासूक्त में कहा हैं कि प्राचीन भारत में राजाशाही तो थी किन्तु राजाशाही निरंकुश नहीं थी । राजा को राजकार्य में सहायता के लिये तथा राजा का व्यवहार एवं सत्ता के ऊपर अंकुश के लिये व्यवस्था थी । राजाशाही की इस व्यवस्था में लोकशाही के तत्त्व दृष्टिगोचर लगते हैं ।[9] एवं सभा के लिये धन का अनुदान भी अलग रूप से होता था ।[10] सम्राट की सभा में **'कर'** देने वाले छोटे राजा और सामंत भी आते थे ।[11] सभासद अपनी प्रतिभा तेज से अपना मंतव्य सिद्ध करते थे ।[12] न्याय भी सभा की सहायता से होता था ।[13] राजा को सलाह देने वाले पुरोहित 'राजकृत्' कहलाता था ।[14] यजुर्वेद में दिये हुए राष्ट्रगीत में ब्रह्म तेज से संपन्न ब्राह्मणों, शूरवीर-विजयशील क्षत्रियों, अधिक दूध देने वाली गायें, बलिष्ठ बैल, वेगवान् अश्वें, विनयशील संस्कारी स्त्रियाँ, युवा, विजयशील महारथी, आवश्यकतानुसार वर्षा, वृक्ष, फल-फूल समृद्धि के साथ सभी का सुस्वास्थ्य जैसी ग्यारह अपेक्षित चीजें में भी राष्ट्रभावना दृष्टिगोचर होती हैं ।[15]

राजदूत के द्वारा भी कार्यनिष्पन्न किये जाते थे । **"दूतेव हि ष्ठो यशसा जनेषु ।"**(ऋग्वेदः 10-106-2) के द्वारा दूत की प्रतिष्ठा दिखाई देती हैं । दूतकार्य के लिये प्रतिष्ठावान् व्यक्ति की ही नियुक्ति होती थी । वह बलवान, यथोक्तवादी, भ्रातातुल्य सहायक, निन्दा रहित एवं श्रेष्ठ कुलोत्पन्न होने का उल्लेख मिलता हैं ।[16] उनके साथ सैन्य रचना के बारे में कई संकेत संहिता एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में से मिलते है। अथर्ववेद एवं ऋग्वेद में सात-सात सैनिकों की सात पंक्तियाँ अर्थात् उनचास सैनिकों के छोटे-छोटे विभागों का वर्णन भी किया गया हैं ।[17]

युद्धदेवता राजा इन्द्र ऋग्वेद का महान् योद्धा के रूप में साबित हुआ हैं ।[18] वो अपने वज्र के बल से अनेक राक्षसी तत्त्वों का संहार करता था । इसीलिये यजुर्वेद में उनको **"वज्रहस्त"**(यजुर्वेदः-10-12) कहा हैं । ऋग्वेद में तीन हजार कवचधारी सैनिकों का उल्लेख भी मिलता हैं ।[19]

अथर्ववेद के भूमिसूक्त में राजा का स्वकर्त्तव्य पालन एवं मातृभूमि के संवर्धन के लिये प्रजालक्षी कार्य करने का उल्लेख मिलता हैं । यथा सर्वसुखप्रदायिनी मातृभूमि अथवा पृथ्वीमाता की जागृत एवं सावधान विद्वान सभी प्रकार के आलस्य को त्याग कर रक्षा करते हैं वह पृथ्वीमाता हमको प्रिय एवं मीठे दूध के द्वारा सिंचित करती हैं । अथवा हमारा पोषण करती हैं ।[20] ये मातृभूमि सत्कर्म में आशक्त व्यक्तियों

का मातृतुल्य कल्याण करके धार्मिक कृत्यों में रक्षण करती हैं ।[21] मातृभूमि को माता मानने वाले समस्त प्राणी कुलीन हैं । सभी समान भ्रातृभाव से भौतिक सुख प्राप्ति के लिये प्रयत्न करते हैं ।[22]

तात्पर्य हैं कि राष्ट्र का निर्माण बहुत कठिनाई से होता हैं । प्रमादी एवं आलसी लोग थोडे ही काल में दूसरे के दास बन जाते हैं । पृथ्वी अर्थात् राष्ट्र रक्षा के लिये विशाल सत्यवादिता, कठिनव्रत, शुभकर्मों की योग्यता आफतें झेलने की शक्ति श्रेष्ठ विद्याकार्य करने पर लोक को भी सिद्ध कर सकते हैं ।[23] इस प्रकार देशवासीजनों को सत्यनिष्ठ, व्रतधारी, अप्रमादी एवं तेजस्वी बनने का यहाँ भावार्थ है। जिससे राष्ट्र की उन्नति हो सकेगी । धन-धान्य तथा शारीरिक, आत्मीक एवं सामाजिक उन्नति प्राप्त होगीं। ऋग्वेद के एक सूक्त में भारत वर्ष की नदियों के नाम हैं और उनके ऋषि कामना पूर्ति के लिये विनय कर रहे हैं । नदियाँ पवित्रता के साथ कल्याण करने वाली पवित्र देवता थी । इसलिये कामना पूर्ति की तथा आर्यदेश की एकता तथा अखंडताकी कल्पना की जाती हैं ।[24] उनका यह लोक तथा परलोक दोनों सुधरेगें । जो लोग इस जन्म में स्वार्थी, आलसी, विलासी और अज्ञानी हैं वो दूसरे जन्म में भी दास के रूप में उत्पन्न होगें । तथा उनकी मोक्षप्राप्ति नहीं हो पायेगीं ।

इस राष्ट्र को पूर्वजों ने समृद्ध बनाया हैं । इसीलिये कहा हैं कि हमारी ये पृथ्वी और राष्ट्र के लिये हमारे पूर्वजों ने जो अनेक पराक्रम किये हैं, जिस पृथ्वी में देवों ने असुरों को पराजित किया है, जिस पृथ्वी पर गौ, अश्वादि विशेष रूप से आश्रित हुए हैं ये हमारी मातृभूमि(राष्ट्र) हमारे ज्ञान, तेज, वीर्य, ऐश्वर्य की वृद्धिदायक बनें ।[25] ऐसी राष्ट्र भावना की शुभदृष्ट्री अथर्ववेद के इस भूमिसूक्त में राष्ट्रभावना के उमदा हेतु उल्लेखित हुई हैं । राष्ट्र के अभ्युदय के लिये प्रत्येक देशभक्त में अद्वितीय जोश होता हैं । और देश की उन्नति के लिये अथक प्रयत्न भी करने की नेम रखता हैं । वेदों में जो राष्ट्रीय भावना वर्णित हैं इससे हम कह सकते हैं कि वेदकाल में वर्णित राष्ट्रीय भावना का जतन होता ही रहा हैं । इसलिये तो वर्तमान में भी व्यक्ति देश के लिये आत्मीय भाव अवश्य रखता हैं । और आबालवृद्ध सभी भारतीयों राष्ट्रप्रेम की इस भावना को जागृत करने के लिये साल में दो बार बडे त्योहार के रूप में उत्सव भी मनाते हैं । इस प्रकार वेदों में भारतीय राष्ट्र की उन्नत कल्पना के दर्शन प्राप्त होते हैं, एवं स्थान-स्थान पर राष्ट्र के एकत्व और देशभक्ति का सरस राग स्पष्टतः सुनाई पडता हैं ।

सन्दर्भ सूची

1. वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहितः । यजुर्वेदः-9-23. पं.श्रीरामशर्मा आचार्य भगवतीदेवी शर्मा-हरिद्वार-1997
2. इमं देवाऽअसपत्नं सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ।
इमं मनुष्य पुत्रम् अमुष्यै पुत्रम् अस्यै विशऽएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानां राजा ॥ – यजुर्वेदः-9-40
3. अथर्ववेद-3-4, संपादक - श्रीराम शर्मा, हरिद्वार, 1997.
4. अयं राष्ट्र संगमनी.... (ऋग्वेदः-10-125-3)
5. क्षत्रस्य योनिरस्य क्षत्रस्य नाभिरसि । मा त्वा हिंसीन्मा मा हिंसीः ।
निषसादधृतव्रतो वरुणः पस्त्यास्वा । साम्राज्याय सुक्रतुः ।

मृत्यो पाहि विद्यात्पाद । कोऽसि कतमोऽसि । कस्मै त्वा काय त्वा ।
सुश्लोक सुमऽगल सत्यराजन ॥ यजुर्वेदः-20-1, 2-4.

6. यजुर्वेदः - 20-9, एवं अथर्ववेदः - 3-4-2, 6-88-3.
7. किं न इन्द्रः जिधांससि भ्रातरो मरुतस्तव ।
तेभिः कल्पस्वः साधु या मा नः समरणे वधीः ॥ –(ऋग्वेदः-1-170-2)
8. समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥ (ऋग्वेदः -10/191/3-4)
9. अथर्ववेदः 7-12.
10. ऋग्वेदः 4-2-5.
11. छांदोग्योपनिषद - 8-14-1.
12. अथर्ववेदः 7-12-14 एवं ऋ. 10-166-4.
13. ऋग्वेदः 1-24-1/15 पारासर गुह्यसूत्र-3.13.
14. अथर्ववेदः 3-5-7. ऐतरेयब्राह्मणः 8-17-5
15. आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम..... न ओषधयः पच्यतां योगक्षेमो नः कल्पताम् । ....यजुर्वेदः-22-22
16. किमु श्रेष्ठः किं यविष्ठो... भ्रातर्द्रुण इद्भूतिमूदिस ॥ ऋग्वेदः-1-161-1
17. सप्तमे शाकिनः । ऋग्वेदः 5-52-17 एवं –ऋग्वेदः 1-85-1.
18. ऋग्वेदः 7-18-10-103
19. त्रिशच्छत वर्मिणः - ऋग्वेदः 5-27-6.
20. यां रक्षन्त्यस्वना विश्वदानीं देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम् ।
सा नो मधु प्रियं दुहामथो उक्षतु वर्चसा ॥ अथर्ववेदः 12-1-7.
21. अथर्ववेदः - 7-6-2.
22. ते अजेष्ठा अकनिष्काम.... मर्या आनो अच्छा जिगातन ॥ (ऋग्वेदः 05-59-09)
23. सत्यं बृहद् ऋतमुग्रं दीक्षा..... लोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥ अथर्ववेदः 12-1-1.
24. इयं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रीस्तोमं सचता परुष्ण्या ।
आसिकन्या मरुद् वृधे वितस्तयाऽर्जिकीये श्रृणुह्या सुषोमया ॥ ऋग्वेदः - 10-75.
25. यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे.... वर्चः पृथिवी नो दधातु ॥ अथर्ववेदः - 12-1-5.

❋ ❋ ❋